विद्वत्कवि

श्री हरिदास सिद्धान्तवागीश भट्टाचार्य प्रणीतम्

❁ वङ्गीयप्रतापम् ❁

(नाटक)

की

विशद् आलोचना



--डा० हरिदत्त शर्मा

विद्वत्कवि

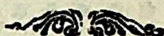
श्री हरिदास सिद्धान्तवागीश भट्टाचार्य प्रणीतम्

वङ्गीयप्रतापम्

(नाटक)

की

विशद आलोचना



आलोचक—

डा० श्री हरिदत्त शास्त्री एम० ए०, पी-एच० डी०

अध्यक्ष, संस्कृत विभाग

डी० ए० वी० कालिज, कानपुर।



प्रकाशक—

साहित्य भण्डार, सुभाष बाज़ार, मेरठ।

प्रथम बार [१५००] २०१८ [मूल्य १ रु०

प्रकाशक :

रतिराम शास्त्री,

अध्यक्ष :

साहित्य भण्डार, सुभाष बाजार, मेरठ ।



मुद्रक :

राजबल शर्मा,

अध्यक्ष :

अरविन्द प्रिंटिङ्ग प्रैस, हापुड़ रोड; मेरठ ।

दो शब्द

कविप्रवर श्री हरिदास सिद्धान्तवागीश प्रणीत 'वङ्गीयप्रतापम्' नामक नाटक आगरा विश्वविद्यालय की एम० ए० परीक्षा में निर्धारित है। वह आजकल दुर्लभ है, अतः इस त्रुटि को दूर करने की इच्छा से उस नाटक की यह विस्तृत, पर संक्षिप्त आलोचना परीक्षोपयोगी अंशों को दृष्टि में रखकर लिखी गई है।

आशा है, परीक्षार्थी समुदाय का इससे अवश्य लाभ होगा, तभी मैं अपना प्रयत्न सफल समझूँगा।

हरिदास कृते रेषा, हरेरालोचनोत्तमा।
कृता, छात्रोपकर्त्री चेत् फलेग्रहिरयं श्रमः॥
स्याद् भ्रमाद् दृष्टिदोषाज्जाता यास्त्रुटयोमम।
तत्कृतेऽहं क्षमां याचे प्रह्वः पाठकछात्रकान्॥

दीपावली

७—११—६१ —हरिदत्त शास्त्री

कवि परिचय

कविप्रवर श्री हरिदास सिद्धान्तवागीश १८वीं शताब्दी के अन्त में उत्पन्न हुए। थोड़ी ही अवस्था में ५० वर्ष से पूर्व ही आपने इतने ग्रन्थों का निर्माण किया जो भिन्न२ विषयों के हैं और उनके व्यापक शास्त्र-ज्ञान एवं कविप्रतिभा के परिचायक हैं। उनके प्रकाशित एवं अप्रकाशित ग्रन्थों की नामावली इस प्रकार है—

१ स्मृति चिन्तामणि	
२ रुक्मिणी हरण	(महाकाव्य)
३ विराज सरोजिनी	(नाटिका)
४ युधिष्ठिर समय	
५ विधवा अनुकल्प	
६ वियोग वैभव	(खण्ड काव्य)
७ शंकर सम्भव	,,
८ सरला	(गद्य काव्य)
९ कंसवधम	(नाटक)
१० जानकी विक्रमम्	,,
११ मेवाड़प्रतापम्	,,
१२ वैदिकवाद मीमांसा	
१३ काव्य कौमुदी	
१४ वङ्गीयप्रतापम्	(नाटक)
१५ शिवाजी चरितम्	

प्रकृत वङ्गीयप्रताप में वङ्ग निवासियों के विषय में जो लोगों का विचार है कि वे सफल योद्धा नहीं होते, शारीरिक शक्ति भी उनमें कम होती है। इस परिवाद को दूर करने की दृष्टि से यह नाटक लिखा गया है। इसमें प्रतापादित्य और अकबर के दाहिने हाथ मानसिंह और उसके पुत्र दुर्जनसिंह की लड़ाई का अन्तिम दो अङ्कों में वर्णन है। इसके आठ अङ्कों में यह कथा समाप्त नहीं होती। अन्त में भी कथा की पूर्ति के लिये कुछ अंश जानना शेष रह जाता है जिस का निर्देश हम अङ्क-कथाओं के अन्त में करेंगे।

नाटक के पात्र

पुरुष पात्र—

१	सूत्रधार	नान्दी पाठक
२	पारिपार्श्विक	प्रस्तावना नायक
३	प्रतापादित्य	यशोर देश का राजा
४	शंकर चक्रवर्ती	प्रतापादित्य का मन्त्री
५	गिरीन्द्र	शंकर चक्रवर्ती का सेवक
६	विक्रमादित्य	प्रतापादित्य का पिता
७	गोविन्द दास	एक वैष्णव साधु
८	श्रीनिवास	” ”
९	वसन्तराय	विक्रमादित्य का चचेरा भाई
१०	भवानन्द	वसन्तराय का मन्त्री
११	नीलमाधव	शंकर चक्रवर्ती का पड़ौसी
१२	धीरेन्द्रदत्त	” ”
१३	सूर्यकान्त गुह	प्रतापादित्य का सेनापति
१४	सुरेन्द्रनाथ घोषाल	बंगाल के नवाब की सेना का नायक
१५	अकबर	भारत सम्राट्
१६	टोडरमल	अकबर का अर्थमन्त्री
१७	सेनापति	नवाब का सेनापति
१८	मदनमल्ल	प्रतापादित्य का गुप्तचर
१९	सुखमय	” ”
२०	शेरखाँ	बङ्गाल का नवाब
२१	तोराब अली	नवाब का मित्र
२२	श्रीकृष्ण तर्कपञ्चानन	वसन्तराय का अध्यापक
२३	माधवचन्द्र (अविलम्ब सरस्वती)—	प्रतापादित्य का गुरु
२४	बलराम	नीलमाधव का शिष्य
२५	केशव	बलराम का मित्र

२६	राघवराय या कचुराय—वसन्तराय का छोटा पुत्र	
२७	दुर्जनसिंह	मानसिंह का पुत्र
२८	उदयादित्य	प्रतापादित्य का पुत्र
२९	मानसिंह	अकबर का सेनापति
३०	मुकुन्द घोष	शंकर चक्रवर्ती का सहयोगी
३१	दुर्गापद	एक ब्राह्मण
३२	रवाहूतगण	निमन्त्रित पण्डितगण
३३	वीरेन्द्र वर्मा	सैनिक वेषधारी प्रतापादित्य का शस्त्र-गुरु
३४	सलीम	अकबर का पुत्र
३५	खुसरो	अकबर का नाती
३६	रूपराय वसु	राघवराय का मामा
३७	गंगाजल नाम	प्रतापादित्य की तलवार
३८	चन्द्रराय	विक्रमपुर का राजा
३९	केदार राय	एक जीगीरदार
४०	मन्त्री	अकबर का मन्त्री
४१	वामन शर्मा	एक तपस्वी जो नवाब का कैदी था
४२	इब्राहीम	अकबर का सेनापति
४३	रडा	पोर्तुगाल का जहाजी डाकू
४४	मुहम्मद	प्रतापादित्य का उर्दू का गुरु

इसी प्रकार दौवारिक गण, धीवर गण, सैनिक गण तथा वैतालिक भी पुरुष-पात्र हैं।

स्त्री पात्र

१	कल्याणी	शंकर चक्रवर्ती की स्त्री
२	वामा	कल्याणी की सेविका
३	पद्मा	प्रतापादित्य की महारानी
४	इन्दुमती	प्रतापादित्य की पुत्री
५	नर्तकी गण	

स्थानों के नाम--

१	चक्रश्री	बसन्तराय का अधिकृत नगर
२	हिजली	इन्शाखाँ की जागीर
३	धूमघाट	प्रतापादित्य की राजधानी
४	इच्छामती	एक नदी
५	यशोर	विक्रमादित्य की राजधानी
६	वजवज	एक दुर्ग का नाम
७	कोटालि पाड़ा	माधवचन्द्र का ग्राम
८	प्रसादपुर	नवाब की राजधानी



अङ्कों की क्रमशः कथा

सहायलाभ नामक प्रथमाङ्क की कथा

शिव और लक्ष्मी की वन्दना के पश्चात् सूत्रधार वर्णन करता है कि काश्यप वंश के धुरन्दर काश्यप पुरन्दर से पांचवीं पीढ़ी में बलराम हुये उनका सबसे छोटा पुत्र रामदास था। रामदास के पश्चात् सातवीं पीढ़ी में गंगाधर हुये जिनका पुत्र नकीपुर के राजा की सभा का नवरत्न हरिदास शर्मा हुआ। जिसने वङ्गीयप्रताप नाम का नाटक बनाया। सूत्रधार ने सूचना दी कि शंकर चक्रवर्ती मातृभूमि की सेवा का उपदेश देकर वनवास को चले गये। वे दुरात्मा नवाब के अत्याचारों से अति दुःखी थे और चाहते थे कि वङ्गीय भूमि का इनके अत्याचारों से मोक्ष हो। जंगल में उन्होंने देखा कि एक शेर गरज रहा है पर वे शेर को अपने पड़ौसी मुसलमानों से अच्छा समझते हैं क्योंकि वह शेर किसी नारी का सतीत्व हरण नहीं करता, न धर्म ग्रन्थों को जलाता है, न धर्म मन्दिरों को तोड़ता है। किन्तु जब शेर उनके पास आता है और प्रहार करना चाहता है तब वे उसे एक बाण के द्वारा गिरा देते हैं। इस पर प्रतापादित्य का एक सैनिक उन्हें धमकाता है कि तुमने उसे क्यों मारा ? यहाँ प्रतापादित्य और शंकर चक्रवर्ती की जान पहचान हो जाती है। बात २ में शंकर को मालूम पड़ता है कि वे विक्रमादित्य के पुत्र हैं। इसी अवसर पर शंकर प्रतापादित्य के मानसिक भावों की जिज्ञासा से देश की दुर्दशा का वर्णन करता है और दोनों नवाब के अत्याचारों से दलित वङ्ग देश के उद्धार के लिये कटिबद्ध हो जाते हैं। शंकर जिस उद्देश्य से घर से निकला था उस उद्देश्य के मार्ग में निराशा का अन्धकार दूर हो जाता है और उद्देश्य की पूर्ति के लिये प्रतापादित्य जैसा सहायक मिल जाता है।

विहङ्गनिपात नामक द्वितीयाङ्क की कथा

विक्रमादित्य भगवान् के भजन में निरत हैं। वे देखते हैं कि श्रीनिवास और गोविन्ददास मन्दिर में भगवान् का कीर्तन कर रहे हैं। गोविन्ददास उनसे

उनके वैराग्य का कारण पूछता है। विषयासक्त वसन्तराय के कारण मैं निर्विण्ण हूं, ऐसा वे कहते हैं। गोविन्ददास और श्रीनिवास ऐसा गाना गाते हैं जिससे विक्रमादित्य भक्तिरस में विह्वल हो जाता है। इतने में ही एक रक्त-रञ्जित बाणाहत पक्षी सामने आकर गिर पड़ता है। विक्रमादित्य द्वारपाल से पूछते हैं कि इसे किसने मारा है? उसे मालूम पड़ता है कि इसको मारने वाला बसन्तराय है। विक्रमादित्य बसन्तराय और उसके मन्त्री भवानन्द से मिलना चाहते हैं। विक्रमादित्य ने भवानन्द से पूछा कि तुमने बच्चों को क्या पढ़ाया है? देखो ज्येष्ठ कुमार अर्थात् प्रतापादित्य ने इस पक्षी को मार डाला है। भवानन्द ने कहा कि यह कुमार का हस्तलाघव है। विक्रमादित्य बोला कि प्रतापादित्य के जन्मपत्र में पितृद्रोह लिखा हुआ है, अतः मैं उससे शंकित रहता हूं। बसन्तराय ने प्रताप की बड़ी प्रशंसा की। भवानन्द ने कहा कि प्रतापादित्य बहुत अच्छा है किन्तु कुसङ्गति में पड़कर बिगड़ गया है। शंकर चक्रवर्ती ही प्रतापादित्य की आदतें बिगड़ने का कारण है। इस प्रकार भवानन्द ने शंकर चक्रवर्ती की पर्याप्त निन्दा की। विक्रमादित्य दुखी होकर बंगाल को छोड़कर बनारस जाने की इच्छा प्रकट करने लगे। विक्रमादित्य ने शंकर चक्रवर्ती का साहचर्य छुड़ाने के लिये, उसे (प्रतापादित्य). देशाटन करने का विचार किया और यह निश्चय किया गया कि उसे भारत की राजधानी दिल्ली भेज दिया जाय। बसन्तराय ने कहा कि कहीं ऐसा न हो कि दिल्ली जाने पर प्रतापादित्य की आदत और खराब हो जाय। भवानन्द को आदेश दिया गया कि वह उसे अपने साथ दिल्ली ले जावे। ऐसा ही किया गया।

कल्याणी परित्राण नामक तृतीयाङ्क की कथा

यमुना में बहती हुई नाव में बैठे हुये धींवर गा रहे हैं। इतने में नील-माधव ने उन्हें आकर पुकारा। धींवर गाने में मस्त थे उसकी उपेक्षा की। जब सिपाहियों को उन्हें पकड़ने का हुक्म दिया गया तो धींवर डर गये। नीलमाधव ने उन्हें आज्ञा दी कि तुम नाव लेकर प्रसादपुर पहुंचो। क्योंकि वहां पर राजकीय पुरुषों का बहुत अत्याचार बढ़ रहा है, शंकर चक्रवर्ती भी अपनी धर्मपत्नी को वहां से हटाकर यशोर देश भेजना चाहते हैं। यहां पर

नीलमाधव और धीरेन्द्रदत्त दोनों की बातचीत होती हैं जो कि दोनों शंकर के पड़ोसी हैं। वार्तचीत से सिद्ध होता है कि शंकर चक्रवर्ती प्रतापादित्य का मन्त्री बनने वाला है। शंकर के मकान पर सुरेन्द्रनाथ घोषाल, सूर्यकान्त गुह और यवन सैनिक जमा हैं। सुरेन्द्र, शङ्कर की स्त्री कल्याणी को उसकी अनुपस्थिति में नवाब की आज्ञा से नवाब के महल में पहुँचाना चाहता है। सूर्यकान्त इस बात से चिन्तित है। कल्याणी चतुर्दशी के दिन शिव मन्दिर में पूजा करने गई है। सूर्यकान्त सेनापति को घूस देकर विदा करने का प्रयत्न करता है और शङ्कर का क्या अपराध है, यह भी पूछता है। जब घूस से काम नहीं चलता तो वह हाथ जोड़कर कल्याणी के प्राणों की भिक्षा मांगता है। सुरेन्द्रनाथ गुह को यह भी याद दिलाता है कि तू ब्राह्मण है, एक ब्राह्मण की स्त्री का अपहरण न कर। अन्त में दोनों में गाली गलौंच बढ़ती है। सुरेन्द्र अपने सैनिकों को सूर्यकान्त को बन्दूक से मारने का जब हुक्म देता है तभी मुकुन्द घोष और धीरेन्द्रदत्त एकदम आकर उसे बचा लेते हैं। किन्तु उस घमासान लड़ाई में सूर्यकान्त घायल हो जाता है। मुकुन्द घोष कैद कर लिया जाता है और धीरेन्द्रदत्त मूर्छित हो जाता है। कल्याणी शंकर की पूजा करके जब अपनी दासी के साथ लौटती है, तब 'बबबम' इस प्रकार की ध्वनि शिव मूर्ति को प्रसन्न करने के लिये करती है। सुरेन्द्र समझता है कि यह बम मारना चाहती है। किन्तु जब सुरेन्द्र के यवन सैनिक उसे घेर लेते हैं तब वह सब देवताओं को याद करती हुई मूर्छित हो जाती है। सुरेन्द्र उसके सौन्दर्य को देखकर मोहित होकर उससे प्रेमालाप करता है और उसकी नौकरानी वामा को धक्का देकर ज्योंही पकड़कर नवाब के घर ले जाने के लिये तैयार होता है, त्योंही शंकर चक्रवर्ती और प्रतापादित्य आ जाते हैं और दोनों रिवाल्वर की एक २ गोली से सुरेन्द्र का काम तमाम कर देते हैं। कल्याणी अपने पति को न पहचानते हुए उनकी ओर छुरी लेकर दौड़ती है किन्तु बाद में पहचानकर वहीं मूर्छित होकर गिर पड़ती है।

राज्यलाभ नामक चतुर्थ अङ्क की कथा

धीरेन्द्रदत्त और वामा यशोर देश के एक बगीचे में बैठे हैं और कल्याणी

के बचाने की बात कर रहे हैं। उनकी बातचीत से यह भी मालूम पड़ता है कि यशोर राज्य पर यवन सेना नौकाओं से चढ़ाई कर रही थी कि यवन सेना में यवनों के वेष में रहने वाले वीरेन्द्र वर्मा ने सूर्यकान्त और मुकुन्द घोष की सहायता की जिससे कि शङ्कर और प्रतापादित्य ने मिलकर यवन सेना को मार भगाया। इस लड़ाई में नवाब का सेनापति सुरेन्द्र मारा गया। उधर दिल्ली में अकबर अपने दरबार में बैठा हुआ बङ्गाल के विषय में बातचीत कर रहा है। उसे मालूम हो गया है कि प्रतापादित्य दिल्ली आया हुआ है। महाराणा प्रताप और मानसिंह में किस प्रकार फूट पड़ गई है यह उसे याद आ रहा है। इतने में मानसिंह का एक पत्र द्वारपाल ने लाकर अकबर को दिया जिसमें महाराणा प्रताप के द्वारा किये गये मानसिंह के अपमान का वर्णन था और मानसिंह ने यह भी लिखा था कि अब मैं लौटकर आमेर नहीं जाऊंगा, यहीं मर जाऊंगा। उसी समय टोडरमल ने बंगाल की दशा बताते हुये कहा कि वहां का राजा विक्रमादित्य सन्यासी हो गया है और यशोर देश का राज्य बिना राज्य का है। साथ ही ३ साल से बंगाल का कर हमें नहीं मिला न कोई संदेश ही। अकबर ने कहा कि बंगाल का नवाब क्या करता है ? मालूम पड़ा कि कर मिलता है पर वह स्वयं रख लेता है। अकबर ने हुक्म दिया कि उसकी हालत का पता लगाओ। इसी समग दिल्ली में रहने वाले प्रतापादित्य और शंकर को बुलाया जाता है। टोडरमल प्रताप को 'खपुष्पाञ्जली राजतां श्रीपदाब्जे'।

इस समस्या की पूर्ति के लिये कहता है जिसकी पूर्ति निम्न प्रकार से की गई है—

कवीनां प्रवर्य्यैश्चिरं पूर्यते या
समस्या मया सैव चेत् पूरणीया।
विधावुष्णरश्मिः कृशानौ च शैत्यं
खपुष्पाञ्जली राजतां श्री पदाब्जे॥

(यहां उष्ण रश्मिः, शैत्यं और खपुष्पाञ्जलिः यह तीनों राजतां क्रिया से

अन्वित हैं जिनका आधार क्रमशः चन्द्रमा, अग्नि और श्रीचरण है) टोडरमल पूछता है कि राज्य का शासन छोड़कर कविता का शासन क्यों करने लगे। (शंकर समझा कि टोडरमल चाहता है कि प्रतापादित्य राज्य सूत्र कभी ग्रहण न करे, इसलिये बीच में बोल पड़ा कि प्रतापादित्य शासन नहीं करना चाहते यह आपने कैसे जाना। टोडरमल ने व्यंग्य से कहा क्योंकि तीन साल से कर नहीं भेजा। यह भी पूछा कि तुम कौन हो? शंकर ने कहा कि मैं ब्राह्मण हूं और इनका मन्त्री हूं तथा वसन्तराय ने कुमार को राज्य से वंचित करने का षड्यंत्र करके शिक्षा ग्रहण करने के बहाने दिल्ली भेज दिया है। टोडरमल ने पूछा तुम यहां कब से रहते हो? शंकर ने कहा तीन साल से। इतनी लम्बी अवधि में हमसे क्यों नहीं मिले। यह पूछे जाने पर शंकर ने कहा कि मौका नहीं मिला। इतने में अकबर ने पूछा कि प्रतापादित्य यहां कितने दिन रहेगा तथा वसन्तराय का कैसा स्वभाव है? टोडरमल ने कहा वह नीति-निपुण है तथा एक जंगल में मकान बनाकर रहता है। यह भी कहा कि प्रतापादित्य! मैं तुम्हें कुछ इनाम देना चाहता हूँ। प्रताप ने कहा कि आपका दर्शन ही मेरे लिये इनाम है। अकबर ने कहा कि क्या तुम्हें मैं यशोर राज्य का स्वामी बना दूं? दरबार के सब लोग कह उठे कि बहुत अच्छा होगा, परन्तु प्रताप मन में सोचने लगा कि चाचा के साथ कृतघ्नता ठीक नहीं। शंकर ने समझाया कि यह तुम्हारी मूर्खता है। यह भी कहा कि वसन्तराय ने कर नहीं भेजा, इसलिये अकबर ने उसे आज से राजा मानना अस्वीकार कर दिया है। प्रतापादित्य के थोड़ो देर चुप रहने पर अकबर ने पूछा कि क्या सोचते हो? प्रताप ने कहा कि वसन्तराय मुझे राजा नहीं मानेंगे यही शंका है। अकबर ने टोडरमल की सलाह से निर्णय किया कि यशोर राज्य को जो कर देना है, वह कर यदि प्रतापादित्य दाखिल कर दें तो हम इसे राजा घोषित कर देंगे। शंकर ने कहा कि चलते समय पिता जी ने कुमार को व्यय के लिये धन दिया था कुमार मितव्ययी है, अतः यशोर राज्य का कर अपने जेब खर्च से ही दे सकते हैं। इतना धन इन्होंने बचा लिया है। अकबर ने कहा कि तो कर जमा कर दो, हम तुम्हें राजा पद का प्रमाण पत्र देते हैं और मन्त्री को आदेश दिया कि आज से १२००० राजपूत सेना के योद्धा

और १००० मुगल सैनिक कुमार के अधीन रहें। यदि बंगाल का नवाब इस आदेश के विरुद्ध कार्य करे तो प्रताप उसका उचित प्रबन्ध करे। इस घटना के बाद नमस्कार करके प्रताप विदा हुआ और दरबार समाप्त कर दिया गया।

वंगेश विजय नामक पञ्चमाङ्क की कथा

इच्छामती नदी के किनारे यवन के वेष में प्रतापादित्य का गुप्तचर मदनमल्ल, नवाब का सेनापति तथा कुछ यवन सैनिक खड़े २ बातें करते हैं। सेनापति ने मदनमल्ल से पूछा कि तुम कहते थे कि मैं यशोर राज्य में बचपन से रहा हूं, वहां के भूगोल को अच्छी तरह जानता हूँ, तो बतलाओ चढ़ाई के लिये सेना सन्निवेश कहां किया जाय ? मदन ने कहा कि यही जगह ठीक रहेगी क्योंकि इसके तीनों तरफ नदी और तालाब हैं अतः विपक्ष-शङ्का यहां नहीं है। सेनापति बोला विपक्ष का हमें डर नहीं, केवल नवाब की आज्ञा से ही यशोर पर हमला करना है। मदन ने भी हां में हाँ मिलाई। वहां पर खेमे गाड़ दिये गये। अब मदन ने सोचा कि प्रतापादित्य दिल्ली से आ चुके होंगे, इस समय पटना में होगा तथा सुन्दर ने यहां का सब हाल बता दिया होगा। वीरेन्द्र ने अभी कहा था कि कुमार नदी के पश्चिम किनारे पर छिपे बैठे हैं और हमले के लिये नौकायें इकट्ठी कर रहे हैं। सैनिकों ने खेतों से मूली उखाड़कर खाना शुरू कर दिया। कृषक को उन्होंने धमकाया और वे भाग गये। नवाब तम्बू में बैठा कल्याणी का चित्र देख रहा है और कहता है कि इसके केश, स्तनमण्डल और रोम और कपड़े बड़े सुन्दर हैं। मालूम पड़ता है यह फोटो बालों में कंघी करते समय ली गई है। इतने में तुराबअली कुछ नर्तकियों को साथ लेकर आ गया और कहा कि नवाब साहब को नृत्य दिखाओ। नवाब कल्याणी की याद करके कहता है कि वह इनसे भी बढ़िया होगी, तुराब ने कहा कि हुजूर ऐसा ही है और पूछा कि क्या आप कल्याणी के लिये ही आये हैं। नवाब ने कहा, यह बात नहीं। एक बार वामन शर्मा नाम के एक तपस्वी को नजरबन्द किया गया था तथा उसकी लड़की और परिवार को बुलाने के लिये सिपाही भेजे थे किन्तु दुरात्मा प्रताप ने उन्हें

मार भगाया। अतः उसका दमन ही मुख्य प्रयोजन है। इसी समय गुड्डुम-गुड्डुम दुम इस प्रकार तोप की आवाज सुनाई दी। तुराबअली नवाव के पीछे जा छिपा और कहा कि रक्षा कीजिये। इतने में हरहर महादेव और जय महाकाली की आवाज आई। नवाव ने प्रतिहारी से पूछा कि क्या हो रहा है? उसने कहा कि प्रतापादित्य ने चढ़ाई कर दी है। नवाव ने कहा—अहो! इन तुच्छों की यह हिम्मत और सेना को सामना करने का आदेश दिया। तुराव से दूरवीन मंगाकर देखा तो तुराव ने कहा कि सिर नीचा कर लीजिये नहीं तो गोली आ लगेगी इस प्रकार पूर्व, पश्चिम और उत्तर से एकदम हमला हुआ। नवाव रंगरलियां भूल गया। जब पिटकर मुगल और पठानों की सेना भागने लगी तो नवाव ने धमकाया और देखा कि शंकर चक्रवर्ती अपनी सेना में उत्साह फूंक रहा है। नवाब से न रहा गया। वह तलवार लेकर मैदान में आ गया। शंकर ने उन पर प्रहार किया कि प्रताप ने वीच में आकर रोक दिया शंकर ने प्रताप के पंजे मे छुडाकर नवाव को भाले से घायल करना चाहा नवाव ने भी तलवार पर वार किया। इतने में नवाब ने अपनी पगड़ी उतार कर प्रतापादित्य के पैरों पर रख दी। इतने में कुछ नगर की हृतभर्तृका स्त्रियां रोती हुई वहां आ निकलीं। प्रतापादित्य ने नवाव को निःशस्त्र करके बन्दी बनाया तथा छिपे हुए तुराबअली के हथकड़ी डाल दी। इस प्रकार बंगेश नवाव को प्राणदान देकर कैद में रक्खा। एवं प्रताप ने यह घोषणा की कि जिस जगह युद्ध हुआ है उसका नाम आज से संग्रामपुर पड़ेगा।

प्रताप राज्याभिषेक नामक षष्ठाङ्क की कथा

काली के महामंदिर के आंगन में वसन्तराय के गुरु श्रीकृष्णतर्क पंचानन काली की स्तुति कर रहे हैं। वे संसार की अनित्यता पर विचार कर रहे हैं। वे वनारस जाकर रहना चाहते हैं किन्तु विक्रमादित्य और बसन्तराय उन्हें जाने नहीं देते। इतने में प्रतापादित्य के गुरु अविलम्ब सरस्वती माधवचन्द्र ने आकर उन्हें प्रणाम किया। तथा पूछा कि जब कुमार प्रतापादित्य दिल्लीश्वर अकबर से इनाम में सेना सज्जा प्राप्त कर नवाब को जीतकर आये तो विक्रमादित्य और बसन्तराय हर्षविषाद के संगम में गोता लगाने लगे, क्या

यह बात सच है ? माधवचन्द्र ने कहा कि यह सब झूठ है। यह अफवाह भवानन्द ने उड़ाई थी। अतः पूरा विश्वास नहीं होता। किन्तु प्रतापादित्य संकुचित होकर जब बसन्तराय के पास पहुंचे तब उन्होंने उन्हें आशीर्वाद अवश्य दिया तथा विक्रमादित्य ने अपने राज्य में से दस आने प्रताप के और छः आने बसन्तराय के इस प्रकार से यशोर राज्य का विभाग कर दिया है इस प्रकार सुना गया है। प्रतापादित्य राजपूतों और मुगलों की सेना को दिल्लीश्वर से प्राप्त कर यशोर में आ गये हैं, यह भी मालूम पड़ गया है। इसके बाद माधवचन्द्र ने कहा कि पुराना यशोर का किला बसन्तराय को दे दिया गया तथा कुमार के लिये धूमघाट पर नया नगर बनवाने की एवं नवाब को छोड़ देने की विक्रमादित्य ने आज्ञा दी है। प्रताप की लड़की बिन्दुमती की शादी चन्द्रद्वीप के राजा रामचन्द्र से करने की तैयारी की जा रही थी कि भवानन्द और गोविन्ददास आदि ने रामचन्द्र को बहका दिया कि धूर्त प्रतापादित्य कन्या के विवाह के बहाने तुम्हारी हत्या करके तुम्हारे राज्य को हड़प लेगा। रामचन्द्र प्रतापादित्य के पुत्र उदसादित्य की मदद से नावों के द्वारा द्वीप से भाग गया। श्रीकृष्ण तर्क पंचानन ने पूछा कि कुमार बसंत राय के मन्त्री भवानन्द को मन्त्रिपद से हटा क्यों नहीं देते ? माधवचन्द्र ने कहा कि मक्कार भवानन्द अब तो प्रतापादित्य का मन्त्री बन बैठा है इस बात से बसन्तराय कुमार से नाराज हैं। तर्क पंचानन ने आशंका प्रकट की कि ऐसा न हो कि दुरात्मा भवानन्द कुमार की इज्जत में बट्टा लगावे। दुःख की बात है कि विक्रमादित्य प्रतापादित्य के अभिषेक की तैयारी कर रहे थे कि वे दिवंगत हो गये। अब शंकर प्रतापादित्य के अभिषेक की तैयारी कर रहे हैं मैं चाहता हूं कि इस अभिषेक संस्कार का आचार्यत्व आप करें। माधवचन्द्र के हाथ में पुस्तक को देखकर तर्क पंचानन ने पूछा कि क्या यह अभिषेक की पद्धति है ? माधव ने कहा कि नहीं। कनिष्ठतात श्री मधुसूदन सरस्वती की बनाई हुई अद्वैत सिद्धि है। तर्क पंचानन को यह जानकर कि माधवचन्द्र उनके वंशज हैं, आश्चर्य हुआ और पूछा कि यह पुस्तक कहां से मिली ? माधव ने कहा कि दिल्ली से मधुसूदन सरस्वती ने शंकर के द्वारा यह पुस्तक

हम लोगों के देखने के लिये भेजी है। 'तो क्या उन्हें दिल्ली पसन्द है ?' 'नहीं'। अकबर ने उनकी कीर्ति सुनकर उन्हें बुलवाया था। कुछ दिन ठहरकर वे बद्रिकाश्रम चले गये। उनकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर दिल्लीश्वर ने कहा था कि—

"वेत्ति पारं सरस्वत्याः मधुसूदनसरस्वती।
मधुसूदनसरस्वत्याः पारं वेत्ति सरस्वती॥"

कुमार के अभिषेक के कारण धूमघाट नगर में धूमधाम है। स्वाहूत प्रसिद्ध ब्राह्मणों को आमन्त्रित किया गया है, उन सबको मुद्राङ्कित प्रमाणपत्र दिया जा रहा है। बलराम और केशव जो माधवचन्द्र के शिष्य हैं, सूंघनी सूंघ रहे हैं और तम्बाकू खा रहे हैं और सबसे पूछते हैं कि आप कहां से आ रहे हैं। बुलाये गये स्वाहूतों में से एक ने पूछा कि यहां तम्बाकू मिलेगी, क्योंकि आजकल तम्बाकू विष्णु का स्वरूप है। स्त्रियां उसे गुड़गुड़ी में पीती हैं, कुछ लोग उसे नस्य और चुरट, हुक्का आदि के रूप में चक्राकार गोल नली से सेवन करते हैं। अतः अच्युत स्वरूप है। तथा इसी तम्बाकू के दस अवतार हैं।

आलवालाम्बुचरश्च[1] फूत्कृतिकरस्तो[2]यान्तरे[3] शब्दनः।
वक्षः[4] क्षोभकरो महाध्वरगतो[5] धूमध्वजो[6] भूभृताम्॥
क्षेत्रप्राप्तवनो[7] हलाख्य[8]सुगतः[9] प्रान्ते च कल्किस्तया[10]।
एते श्रीहरिताम्रकूटविधृताः कार्यवतारा दश॥

१. मत्स्यावतार (हुक्के में पानी भरा रहता है)। २. वराहावतार (आग जलाने के लिये फूंक मारना)। ३. कच्छपावतार। ४. नृसिंहावतार (खाँसी करता है)। ५. बामनावतार (हुक्का वालों के यहां अग्नि जलती रहती है)। ६. परशुरामावतार (अग्नि वाला)। ७. रामावतार (खेतों पर हुक्का पीते हैं)। ८. बलरामावतार। ९. बुद्धावतार। १०. कल्कि अवतार (हुक्के के नहचे में मल जम जाता है)।

इस प्रकार भिन्न २ ब्राह्मणों से दुर्गा सप्तशती, माघकाव्य, नैषधकाव्य, कादम्बरी, कालिदास और भवभूति की रचनायें पूछी गईं। सबने उल्टे सीधे

उत्तर दिये। सबको यथायोग्य सत्कार करके विदा किया गया। इनमें कोई वैधकरण, कोई आलंकारिक, कोई दार्शनिक, कोई स्मार्त था। सबने अपने २ शास्त्रों की प्रशंसा की। राज्याभिषेक के बाद प्रतापादित्य शङ्कर चक्रवर्ती आदि आये और उनकी प्रशंसा में वैतालिकों ने सूक्तियां पढ़ीं। पद्मा ने ब्राह्मणों को अशर्फियां बांटीं। दुर्गापद नाम के ब्राह्मण ने प्रतापादित्य के राज्य की प्रशंसा की।

दुर्जननिधन नाम का सप्तम अङ्क

वीरेन्द्र वर्मा ने गुस्से और घबराहट में आकर यह खबर दी कि मार्नासिंह यशोरेश्वर को मारने के लिये आ रहा है। बाहर से अन्दर के शत्रु भयङ्कर होते हैं। प्रतापादित्य ने अभिषेक के बाद उड़ीसा का विजय किया और गोविन्ददेव तथा उत्कलेश्वर नाम के देवताओं की दो मूर्तियां वसन्तराय को लाकर दीं। इधर अकबर को प्रतापादित्य का बढ़ता हुआ प्रताप खलने लगा। किन्हीं कारणों से बसन्तराय की प्रतापादित्य के द्वारा हत्या की गई, तब बसन्तराय की रानी अपने छोटे पुत्र कचुरायोपनामक राघव को लेकर कचुवन में चली गई। वहां उसके मामा रूपराम वसु रहते थे और वहां उसने इंशाखां की सहायता चाही जो हिजली का राजा था। उधर अकबर के मर जाने पर सलीम दिल्ली का राजा बना। सलीम और खुसरू में दिल्ली की गद्दी के लिये झगड़ा हुआ। भवानन्द ने उत्कलेश्वर महादेव के मन्दिर में जाकर बसन्तराय के लिये विलाप करना शुरू किया। राघव भी वहीं आगया। राघव और भवानन्द घण्टों तक वंगदेश की स्थिति पर विचार करते रहे। अन्त में राघव ने यह मनवा दिया कि प्रतापादित्य की पराजय नहीं हो सकती। इतने बीच में मानसिंह का लड़का दुर्जनसिंह आदेश पर चढ़ाई करता हुआ यशोर आया। वहां उदयादित्य और उसमें लड़ाई हुई। परस्पर गाली गलौंच के बाद तलवार बजी और उदयादित्य की तलवार से दुर्जनसिंह का काम तमाम हो गया।

प्रतापविजय नामक अष्टमाङ्क की कथा

मानसिंह अपने पुत्र-मरण पर शिविर में विलाप कर रहा है और

दिल्लीश्वर का भय बंगाल से निकल गया यह देखकर दुखी है। बसन्तराय का लड़का राघव मानसिंह से जा मिला और उसे यहाँ की खबरें देने लगा। मानसिंह ने उससे आक्रमण का समय पूछा। इतने में प्रतापादित्य की सेना आ चढ़ी और मानसिंह ने सन्धि का प्रस्ताव रखना चाहा। राघव ने बहुत रोका, पर वह नहीं माना। उधर सन्धि का प्रस्ताव पहुंचने भी नहीं पाया था कि प्रतापादित्य की सेना आगई। दोनों ओर से अल्लाहो अकबर और जय महाकाली के नारे लगे। गोलियां चलीं। मानसिंह और प्रतापादित्य दोनों आपस में भिड़े। मानसिंह ने कहा कि तुम्हें जिस दिल्लीश्वर ने सेना दी, उसी के साथ कृतघ्नता की जो कि नवाब को भगा दिया। प्रताप ने कहा कि अति मातृद्रोह की अपेक्षा कृतघ्नता को अच्छा मानता हूं। हमारी जन्मभूमि ही अतिमाता है। क्योंकि वह दस मास से अधिक हमें अपनी गोद में रखती है। दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध के बाद शङ्कर चक्रवर्ती, सूर्यकान्त आदि सेनापतियों की सहायता से यवन सेना के सन्निवेश में आग लगा दी गई। प्रतापादित्य ने एक दम सफेद झण्डा खड़ा कर दिया और सूर्यकान्त को प्राणी हत्या करने से रोककर अग्नि बुझाने की तैयारी की। इस युद्ध में मानसिंह की पराजय और प्रतापादित्य की विजय हुई। बङ्गालियों ने दिखा दिया कि वीरता और एकता क्या शक्ति है। अष्टमाङ्क की शेष कथा की पूर्ति इस प्रकार है—

प्रताप और मानसिंह लगातार तलवार से लड़े। तीसरे दिन जब प्रतापादित्य उत्तर दिशा में लड़ रहा था, राघवराय की सलाह से कूटनीतिज्ञ मानसिंह ने दक्षिण दिशा में यह किम्बदन्ती फैला दी कि प्रतापादित्य मारा गया जिससे बङ्ग-सेना भाग खड़ी हुई। जब प्रताप दक्षिण दिशा में पहुंचा तो उत्तर दिशा में भी यही चाल चली गई। सेना के तितर बितर हो जाने से प्रताप की सेना के सब सेनापति मारे गये। घूमघाट की नगरी तहस नहस कर दी गई। प्रतापादित्य को बन्दी बना लिया गया जबकि मानसिंह उसे लोहे के पिंजरे में बन्द कर हाथी की पीठ पर बांधकर अकबर के पास ले जा रहा था तब मार्ग में बनारस पहुँचने पर प्रतापादित्य भौतिक शरीर को छोड़कर कीर्ति शरीर से अमर हो गया।

परीक्षोपयोगी कतिपय गद्य व पद्यों के अंश

* प्रथम अङ्क *

(नान्दी पाठ)

रङ्ग सर्वजगन्नटी गुणवती माया, नटी कर्म्मणी ।
वेशो दृश्यमिदं क्षया यवनिका, यः सूत्रधारः स्वयम् ॥
कुर्व्वन् प्राणि सुखासुखाद्यभिनयं द्रष्टाप्यसौ यः सदा ।
चिन्तातीत गुणः शिवस्त्रिभुवन श्रेयान् ददातु श्रियम् ॥१

सूत्रधार—

विषमयवनराज्यात् प्राज्य दुर्नीतिपूर्णात्
सुषम विषमभाव प्राप्तमिं राजराज्यम् ।
स्वजनकृतमुपेत्य ज्ञातुमिच्छुः स्वभावात्
तमस इव शशाङ्कं पूर्व्ववृत्तानि लोकः ॥८॥

शङ्कर—

नारी धर्म्मं न हरति, न वा जातिनाशं विधत्ते,
धर्म्मं ग्रंथं दलति न च, नो देवमूर्त्ति भनक्ति ।
तीर्थस्थानं कलुषयतिनो नापि वास्तूच्छिनत्ति,
शून्यारण्ये भ्रमति निनदन् सम्मुखस्थं हि नस्ति ॥११॥

शङ्कर—

दक्षेषु सत्स्वपि विभुः सकलेन्द्रियेषु
कर्णेन कर्म्मं कुरुते किलकेवलेन ।
एकेन हन्त ! विदधद्बहुभिर्विधेयं
विघात् कथं नु स यथायथ वस्तु तत्त्वम् ॥१७॥

शङ्कर—

नवीन स्त्रीमात्रं गणयति विलासोपकरणं,
प्रजानां सर्व्वस्वं करगत निजस्वञ्च मनुते ।
तृणस्तेये दण्डं प्रणयति पर प्राणहरणं,
निरीहाणां खेलाकुतुकमसुभिः पूरयति च ॥१६॥

* द्वितीय अङ्क *

भवानन्द—

दुर्जनस्य किल साहचर्य्यंतः सज्जनोऽपि ननु दुर्जनायते ।
सङ्गतं स्फटिकरत्नमुल्मुके निर्म्मलं मलिनमेव दृश्यते ॥११

भवानन्द—स्फटिकादपि चन्द्रादपि च स्वच्छं सतां हृदयम्। शुनः पुच्छादपि कुटिलं धूर्तचित्तम्। सुन्दरहृदयाः सुन्दराण्येव जगन्ति पश्यन्ति ।

विक्रमादित्य—

शिक्षा न सा भवति केवल पुस्तकैः या
या तु प्रदर्शित फला ननु सैव शिक्षा ।
रोगं निहन्ति न सुखस्थित वैद्य विद्यः
नो वा रिपून् विजयते श्रुतयुद्धशास्त्रः ॥१६॥

वसन्तराय—

प्रलोभनकरं परं विविध वस्तु सज्जीकृतं
विलोक्य ननु संयतो भवितुमेव शक्नोति कः ।
विकासि कुसुमावलीललितकानने को जनः
परिस्फुरित सौरभं परिहरन् विहर्त्तुं क्षमः ॥१९॥

* तृतीय अङ्क *

सूर्यकान्त गुह —

एकावज्ञा भवति, न पुनर्भीति लेशः पिशाचे,
हिंस्रे जन्तौ भवति तु भयं केवलं नत्ववज्ञा ।
हिंसापूर्णैः कलुषिततमैर्नित्यरुक्षैः स्वभावै
युष्मासु स्याद्युगपदुदिता भीति सङ्गिन्यवज्ञा ॥१०॥

सूर्यकान्त गुह —

प्रकाण्डभुज मण्डलव्यथितचण्डकोदण्डतः
ज्वलज्ज्वलन वज्रवज्ञवगतैर्निशीतैः शरैः ।
ध्वनन्ननिशमुद्धतं बिजयबद्ध गर्द्धोऽधुना
द्विजोऽपि पतितो यतः क्षितिनले ततः पात्यसे ॥१७॥

प्रतापादित्य—

इदं रहसि रोपितं तनुतरं हि वीजं नवं
सुसन्ततिमहोद्यम प्रचुरवारिसंसेचनात् ।
नवाबविजयाङ्कुरं पिशुननाशकाण्डोदयं
स्वधर्मकुसुमं सतां शुभफलं प्रसौतु क्रमात् ॥२६॥



* चतुर्थ अङ्क *

अकबर—

विद्याबुद्धि समृद्धिसिद्धि विषयेष्वाद्यो जगच्छिक्षकः
देशोऽसावति विस्तृतो बहुजनः शूरोऽपि दक्षोऽपि च ।
भाषाधर्मपरिच्छदा बहुविधा भिन्नाश्चधीवृत्तयः
मन्ये भारतमेकमेव तदिदं पृथ्वीं किलान्यामहम् ॥४॥

अकबर—

गुणज्ञानां न्याय्यं गुणवति पुरस्कारकरणं
तिरस्काराधानं विगुणिविजने वा प्रभवताम् ।
सुवर्णे सद्वर्णं वितरति विधिः कृष्णमयसि
विभेदः को नु स्याद् गुण विगुणयोर्नन्वितरथा ॥१९॥

अकबर—

प्रशंसां निन्दां वा न खलु गणयन्नेव निपुणः
क्रियां कुर्य्यादिष्टामविकलमतिं स्वामनुसरन् ।
गुणोऽपि स्यान्निन्दा जनसदसि दोषेऽपि च यशः
द्वयोरप्येका दृग् भवति हि मनो नैव जनयोः ॥२०॥

अकबर—

प्राज्यैश्वर्य्यं यशोरराज्यमखिलं तल्लेख्यपत्रान्वितं
सैन्यान् जन्यजयक्षमानपि महाराजेत्युपाधिं त्वयि ।
भक्तिस्वीकृतिमाददन्ननु ददे, स्वल्पोऽपि मूल्यान्महान्
स्वर्णस्यागुरयश्चयस्य हि समः, स्वस्त्यस्तु शास्तु प्रजाः ॥२२



* पञ्चम अङ्क *

नवाब—साधु साधु, अस्या हि कुटिलता केशकलापे, कठिनता स्तनमण्डले, चञ्चलता चेलाञ्चले, विच्छायता परिच्छदे, कलङ्कश्च लोमाध्वनीति चित्रदर्शनादुन्नीयते । तत् किमियं प्रवातमासेवमाना रचयति केशसंस्कारम् ।

नवाब—धिक् साहसिक्यं दुर्बलपशूनाम् । शलभानामग्निप्रवेशः स्वदाहाय, सारङ्गाणां वागुरोत्प्लवनमात्मबन्धनाय, बालिशानां ह्रदावगाहनं नक्रोदरपूरणाय, मण्डूकानामाशीविषफणारोहणं तत्तृप्तिसाधनाय, दुर्म्मतेः प्रतापस्य चास्मदाक्रमणं स्वध्वंसाय ।

नवाब—
शस्त्रीभिस्तरवारिभिः सपदि हृत्कण्ठं छिनत्त्युल्वणः
शूलैर्विध्यति, मुद्गरैर्विदलति प्रासैः समाकर्षति ।
अन्योन्यं खनति प्रदश्य दशनान् नालीकनालैः पुनः
मुष्टामुष्टि कचाकचि प्रकुरुते प्रक्षीणशस्त्रो भटः ॥१५॥

नवाब—
पाठानसैनिक-करीश्वर-दम्भ-कुम्भ-
विद्रावण-द्रढ़िम-कीर्तित-कीर्त्ति-सिंहाः ।
वङ्गीयभूप-मृगपोत-भयाद्द्रवन्तः
कस्मात् पलाय्य निपतन्ति कलङ्कसिन्धौ ॥१७॥

नवाब—
भीरुः कापुरुषः प्रभिन्न हृदयः कुण्ठः परश्रीद्विषः
शान्तो धूर्त्ततमश्च वङ्गजजनो निन्देति या वः क्षितौ ।
तामद्य प्रविधय सम्मुखरणे वीर्य्योद्धतान् भोगलान्
अत्याचारपरान् विजित्य सुचिरं कीर्त्तिस्रगाधीयताम् ॥१

नवाब—
जयाम्बु शुचि सत्कीर्त्तिमालामद्य दिधीर्षुणा ।
एत्य ग्लानिकृशानूत्थः कलङ्काङ्गारको धृतः ॥१९॥

शङ्कर—
शश्वद्धर्म्मं क्षपयतितरां यः प्रजानां मृदूनां
आक्रन्दन्तीर्हरति शरणं प्रत्यहं यः परस्त्रीः ।
पापात्मानं घृणितयवनं तं निहत्याद्य सद्यः
वक्षः शेलं चिरमिह भुवस्तीव्रमुत्तोलयामि ॥२०॥

* षष्ठोऽङ्कः *

श्रीकृष्ण—

निःसंख्याचल-साल-सागर-सरित्-प्राण्युच्चयोच्चावचं
ब्रह्माण्डं बहुकोटि-लोमविवरेष्वाधीयते सर्वदा ।
किं तेभ्योऽपि महाणु मे ननु मनः सम्भाव्यते भारवत्
येनास्यार्पणमात्रमेव चरणप्रान्तात् परित्यज्यते ॥१॥

प्र-र—

नारीणां गुड़िका विखण्डितदलं दोक्ता च सक्ता पृथक्,
नस्यं भूरि मनीषिणाञ्च चुरटं चञ्चद्विलासात्मनाम् ।
हुक्का-गुड़गुड़िकाल बला-विलसनैः शेषान् समालम्बते
चक्रं दर्शयते च्युतं वितनुते मुक्तिं प्रदत्ते परम् ॥६॥

प्रथम रवाहूनः—

आल्वालाम्बुचरश्च कुतक्कतिकरस्तोयान्तरे शब्दनः
वक्षः क्षोभकरो महाध्वरगतो धूमध्वजो भूभृताम् ।
क्षेत्र प्राप्तवनो हलास्त्र सुगतः प्रान्ते च कल्किस्तथा
एते श्री हरिताम्रकूट विधृताः कार्य्यावतारा दश ॥७॥

आलङ्कारिकः—

स्वस्योपमानं स्वयमेव सम्भवन् ।
अनन्वयस्यान्वयतो निदर्शनम् ॥
भोगेन हीनोऽपि सदैव भोगवान् ।
विरोधलक्ष्यश्च शिवः शिवोऽस्तु वः ॥१०॥

दार्शनिकः—

सांख्यस्य प्रकृतिप्रभिन्न पुरुषः पातञ्जलस्येश्वरः ।
न्यायस्याष्टगुणीश्वरः कृति निधिर्वैशेषिकस्यापि सः ॥

मीमांसाद्वितये मुनिद्वयकृते वाक्यात्मकश्चाद्वयं ।
मन्त्रो ब्रह्म, यथा तथास्तु भगवान् भूयात् स वः श्रेयसे ॥१३

नेपथ्ये—

स्नातो यात्यभिरूप-रूप-विनमन्मारः कुमारः क्रमात् ।
संसत्सद्मनि पद्मिनीं वनमहापद्मीव पद्मां वहन् ॥
शंसन्तीव यशांसि लाजमिषतः पौराङ्गनाः प्राङ्गणे,
माद्यन्नद्य मदोद्यमैर्जयजयध्वानैर्जनो धावति ॥१८॥



* सप्तमोऽङ्कः *

भवानन्दः—

समारूढे नन्दे दिवमिव वसन्तेऽतिसदये
वहन् भक्तिं जातः परिधृत धुरो राक्षस इव ।
कृताशस्तस्यासीत् स तु मलयकेतुर्निलयनं
ध्रुवं कश्चित् केतुर्निलयनमभून्मेऽपि निभृतः ॥१३॥

राघव—

वीराणां निवहो निगूहति गुहं दस्युं प्रतापञ्चचेत्
पापं ब्राह्मणमप्यसुं क्षणमपि प्राप्य क्षमिष्ये न तान् ।
हत्वैतान् स्रवदुष्णचारु रुधिरैर्बन्धून् पुरा तर्पये
कः पन्थापरिपन्थिनां युधि भवेत् पश्य स्वयं दूरतः ॥२

भवा—

हितैषीदेशस्य स्वजनधन सञ्जीवनपणात्
स्वतन्त्रत्वस्वर्गं भुवियदि यतेतार चयितुम् ।

निपात्यैनं पापः पतति परतन्त्रत्व नरके
विधिर्वामः कामं दलति हि चिराद्भारतभुवम् ॥२६॥

दुर्जनसिंह—

आशीविषस्य विषदन्तचये विनष्टे
गात्राणि जर्जरयते वत कुक्कुरोऽपि ।
सिंहस्यदैववशतो विशतश्च जालं
आकर्षति स्फुटजटां हरिणोऽपि शृङ्गैः ॥२७॥

उदय –

उद्यन्नर्कः क्षपयति तमोराशिमल्पोऽपि गाढं
मूर्च्छन्नग्नेः कण इह वनान्याशु भस्मीकरोति ।
पापान् प्राज्यानपिहिविधमेद्भौमिकः स्वल्पकोऽपि
व्याप्तिः शक्तिर्न भवतितरां सारवत्तैव शक्तिः ॥२८॥

उदय—

विधायविदुद्भूषतः समिति खण्डखण्डान् बहून्
पशून् पिशुनमानसापसदमानसिंहादिमान् ।
यशोरपति-चित्तग-क्षुभित-तीव्र-रोषानले
इहैव जुहवानि वस्तदनु वादसाहाधमम् ॥३६॥

* अष्टमोऽङ्कः *

मानसिंह—

गान्धारादिविशेषदेशविजयाज्ञातेन येनाभवं
सम्राजः किलदक्षिणो भुज इवाश्वासास्पदं शाश्वतम् ।

वङ्गेष्वद्य पराजयेन स चिरान्मानस्य मानो गतः
लोकानामुपहास्य दूष्यमधुना तज्जीवनं यातना ॥१॥

मानसिंह—

सिंहं संहरता नवीनवनजेनाक्रम्य तुच्छात्मना
फुत्कारेण निपातितो गिरिवरस्तार्क्ष्योऽहिना ग्रासितः ।
लोकेऽस्मिन्नथवात्यसम्भवमपि प्रासौति वामो विधिः
गोपालोऽपि जिगाय जिष्णुम समं कृष्णेन हीनं पुरा ॥२

मानसिंह—

षडंशाः सेनायाः क्षितिशयनमुपेता गतदिने
परिश्रान्ताः शेषा निजजयनिराशाः समभवन् ।
तदद्य स पादार्जिनिखिलविलयार्थाजिमसमा
न वेला वालनां प्रबलसरितो वारणसहा ॥४॥

प्रताप —

धत्ते मा दशमासमात्रमखिलानाजीवनं जन्मभूः
स्तन्यं यच्छति सा समाद्वयमियं भक्ष्यं चिरायाङ्गजम् ।
बालेन प्रहृतैव तं प्रहरते सैषा तु सर्व्वं सहा
मातुर्भूमिरनेकधा गुरुतरा तेनाति मातोच्यते ॥१६॥

मानसिंह—

यः शान्ति चिरसञ्चितामपहरन्नुत्तेजयन् वर्व्वरान्
उन्मादयन् दहति च्छिनत्ति दलति स क्ष्मां नु विद्रुह्यति ।
यो वा तं दमयन् स्थिति नियमयन् लोकान् समुल्लासयन्
तां शान्ति पुनरेव साधु सुहितः सन् गाहसो धीत्सति ॥१७॥

पद्य सूक्तियाँ

शत्रुमूलमनुन्मूल्य स्त्री न चिन्त्या जिगीषुणा ।
अन्धकारमनुत्सार्य्य नह्युषामेति भास्करः ॥ १ अंक १०श्लोक

एकेन हन्त ! विदधद्बहुभिर्विधेयं, विद्यात्
कथं नु स यथायथवस्तुतत्वम् ॥ १–१७

एकं वीक्ष्याखिलमपि जनो वेत्ति विक्लृप्त मन्नम् ॥ १–२३

परानुगत्यं हि लघीयसां क्रिया ॥ १–२५

नवकाञ्चन सञ्चयाञ्चितं नहि लौहं समुपैति पीतताम् ॥ २–३

विकासि कुसुमावली ललित कानने को जनः,
परिस्फुरित सौरभं परिहरन् विहर्त्तुं क्षमः ॥ २–१९

तमो हि सूर्य्योऽप्यनुदित्य हन्ति न ॥ ३–२

कुर्यात् कलिर्नु विषमं किमतः परं वा ॥ ३–४

यथा प्रसूनस्य हि पूतिगन्धः ।
हिनस्ति नासां न तथा मलस्य ॥ ३–६

समुद्यति प्रत्युषसि प्रभाकरे ।
निरोद्धुमर्हन्ति तमांसि किं दृशम् ॥ ३–२५

न हि सरल जलौघः पार्श्वं नावं धुनोति ॥ ४–१६

सुवर्णे सद्वर्णं वितरतिविधिः कृष्णमयसि ।
विभेदः कोनुस्याद् गुणविगुणयोर्नन्वितरथा ॥ ४–१९

द्वयोरप्येकादृग् भवति हि मनो नैव जनयोः ॥ ४–२०

योग्यं योग्यजनेऽर्पितं प्रतनुते शान्ति हि, शङ्कान्तु न ।। ४–२९

स्वर्णस्याणुरयश्चयस्य हि समः स्वल्पोऽपि मूल्यान्महान् ।।४-३३

वदतु वस्तु निसर्गमनोहरं
नहि विहित्रिम कान्तिमपेक्षते ।। ५–५

मुष्टामुष्टि कचाकचि प्रकुरुते प्रक्षीणशस्त्रो भटः ।। ५–१५

साधुः सन्नपि भूपालो मन्त्रिदोषेण दुष्यति ।
मन्दं वर्षफलं दत्ते मन्दमन्त्री हि गीष्पतिः ।। ६–५

सदात्मरक्षा श्रुतितो हि विश्रुता ।। ७–५

सन्निपात विकारे हि विषं खल्व मृतायते ।। ७–७

विलसति हि विचित्रा सृष्टि रीदृग् विधातुः ।।७–२८

व्याप्तिः शक्तिर्न भवतितरां सारवत्तैव शक्तिः ।।७–२९

लोकानामुपहास्यदूष्यमधुना तज्जीवनं यातना ।। ८–१

ज्योत्स्नापतेर्घनघटा पिहितस्य नूनम् ।
अस्तं वरं हि परिलुप्त विकास शक्तेः ।। ८–३

न वेला बालूनां प्रबल सरितो वारणसहा ।। ८–४

आयाते हि महावाते नाक्रामेद् गगनं घनः ।। ८–२४

शेषो विशेषेण परं विवर्द्धिनाम् ।
ऋणाग्नि रोगद्विषतां भयावहः ।। ८–३०

क्व मूढ़ जन्तोः सदसद् विवेकः ।। २–८

गद्य सूक्तियां

"वैराग्यादेव विच्छिद्यते संसारतन्तुः" अङ्क २ पृष्ठ २१

"स्फटिकादपि चन्द्रादपि च स्वच्छं सतां हृदयम् ।
शुनः पुच्छादपि कुटिलं धूर्तचित्तम्,
सुन्दरहृदयाः सुन्दराण्येव जगन्ति पश्यन्ति । २-२६ पृ०

निष्फलाः कदर्य्येषु सामवादः । ३-४० पृ०

"धर्म्मोऽधर्म्म इति समाजप्रयोजनम्, देवो दानव इति लोकस्वभाव-विभागः, ईश्वर ईश्वर इति दुर्बलानामाश्वासः, दैवं दैवमिति विपन्नानां सान्त्वनाप्रयोगः, वेदः स्मृतिरिति बालानामलीकप्रलापः ।" ३-४६ पृ०

"अन्तरेण हि पुण्यमवसरञ्च न घटत एव देवदर्शनम् ।" ४-६३ पृ०

"सागरादेव लब्धसत्ताकस्य वर्षोदबिन्दोर्न खल्वात्मदानमपि तस्य प्रति-पादयति प्रतिदानोपकारम् ।" ४-७० पृ०

"न खलु राजते सरोजिनी गोमयचत्वरे ।" ५-७७ पृ०

"शलभानामग्निप्रवेशः स्वदाहाय, सारङ्गाणां वागुरोत्प्लवनमात्म-बन्धनाय, बालिशानां ह्रदावगाहनं नक्रोदरपूरणाम्, मण्डूकानामाशीविष-फणारोहणं तत्तृप्ति साधनाय दुर्म्मते प्रतापस्य चास्मदाक्रमणं स्वध्वंसाय ।"
५-८६ पृ०

"नगरोपकण्ठे सर्वाङ्गोपपन्नमार्यं समाजम्, कालीघाटे भवानीमन्दिरम्, गोपालपुरे गोविन्ददेवम्; अत्र चेममुत्कलेश्वरं प्रतिष्ठाप्य, पात्रेषु दानम्, दीनेषु दयाम्, साधुषु च सौहार्द सम्पादयन् त्वं खलु, मृतोऽपि जीवित एवासि ।" ७-१२२ पृ०

दुर्जनसिंह व उदयसिंह के प्रश्नोत्तर

दुर्ज्जन—वङ्गेष्वपि सौजन्यं जन्यञ्च पश्यतो विस्मितस्यैव निस्पन्दीभावः ।
उदय—पार्व्वत्यपशोः स्वर्गसद्भावं पश्यतः सम्भवत्येव विस्मयः ।
दुर्ज्जन—प्राप्तशक्तेः प्रापयितारं प्रत्येव प्रयोग इत्यपूर्व्वो विस्मयप्रकारः ।
उदय—हिन्दुः खलु हिन्दुदेशे पुनरपि हिन्दुराज्यं स्थापयितुद्युक्ते, प्रतिबध्नाति च हिन्दुनामैव कश्चिदित्ययमप्यपूर्व्वो विस्मयप्रकारः ।

दुर्ज्जन—कायस्थ इति स्वयं हीनोऽप्यात्मनो हिन्दुतया श्लाघते वङ्गे ष्वेव।
उदय—यवनीजातोऽपि हिन्दुम्मन्यो हिन्दुस्थान एव। ७–१३१-१३२ पृ०

× × × ×

दुर्ज्जन—आः ! किमुक्तं भवता—भौमिक एवोच्छिद्य यवनान् निधास्यति राज्यमिति। एष हि पतङ्गस्य वन्हिग्रास प्रयासः, पङ्गोर्गिरिलङ्घनोत्साहः, वातग्रस्तस्य सागरसन्तारसंकल्पः। ७–१३२ पृ०

× × × ×

मान—प्रादुर्भूतास्तु—अभूतपूर्वो निर्वेदः, अजातपूर्व्वा लज्जा, असहनीयः सन्तापः, अचिन्तनीया ग्लानिः, अननुभूतो विस्मयप्रवाहः, अभावनीना च दुश्चिन्ता। अहो ! ईदृशः खलु विषयः पूर्व्वमणुमात्रमपि न जातश्चिन्तागोचरः, यद्वङ्गीयानामद्भुतः सेनासमावेशः, असाधारण्येकता, अतुलनीयः स्वामिरागः, अनुकरणीयाशिक्षा, अवसरानुसारीप्रहारः, चमत्कारिण्यायुधसृष्टिः, पुरुषोचितः समुद्यमः, अनुद्भेदनीया च सर्व्वतो नीतिः। ८–१३६

× × × ×

"केचिदपसरन्ति-मुक्तकच्छाः, अपरे कियदपसरन्त एव निपतन्ति विदीर्णदेहाः, अन्ये चापसर्त्तुकामा एव शेरतेच्छिन्नकण्ठाः, एके च पलायनोपायमपश्यन्त एव प्रहर्तुमीहन्ते लूनचरणाः, केचनपुनरपि धावन्तः समाहूयमाना अपि नापेक्षन्ते सुहृदयो वेदनादूनदेहाः।" ८–१५०

× × × ×

"अद्य हि मानसिंहेन प्रथमत एवात्मनोवलं, विश्रमितुमिव श्रमितुमनुज्ञातम्, अपिक्रमितुमिवाक्रमितुमुपदिष्टम्, अपसर्त्तुमिवोपसर्त्तुमाज्ञातम्, जीवितुमिवमर्त्तुमुत्साहितम्, आहर्त्तुमिव च प्रहर्त्तुमुत्तेजितम् आत्मना चायुधादप्यधिकं वाङ्मात्रेण कलहायितम्।" ८–१५२

× × × ×

"इयं हि नामैकताप्रसूता फलसम्पद्वङ्गवास्तव्यानाम्।" ८–१५४

"शाश्वतमेव शास्त्रावगाहिनां प्रावेणकविलमेवं सन्दिहन्ति काक रक्षिकाः। १–३ पृ०

समालोचना

※ प्रथमाङ्कालोचन ※

शिव और लक्ष्मी को नमस्कार करने के बाद सूत्रधार का प्रवेश होता है, जबकि शिवगणपति या शिवविष्णु या शिवपार्वती का स्मरण उचित था। यहां शक्तिमान् शिव और शक्तिस्वरूपा लक्ष्मी को नमस्कार करना सिद्ध कर रहा है। धनशक्ति, जनशक्ति और प्रभुशक्ति से बढ़कर है। कवि ने अपना परिचय स्वयं इन शब्दों में दिया है—

नकीपुरेशस्य सभाप्रवासी
महाकवि प्राप्ययशोऽभिलाषी।
अङ्काग्नि नागेन्दुमिते शकाब्दे
यन्निर्म्ममे श्रीहरिदासशर्म्मा ॥ १–५

यह नहीं कहा जा सकता कि नकीपुर कहां अवस्थित था, आज उसे किस नाम से पुकारा जाता है ? शास्त्रावगाही कविवर श्री हरिदास सिद्धान्तवागीश में कवित्व और दार्शनिकत्व का अद्भुत समावेश था। वे लिखते हैं कि—

दुरूहशास्त्राभिनिवेशिनोऽपि
कान्तं कवित्वं सरसञ्च दृष्टम्।
महाकठोरस्य महोरुहस्य
किं पल्लवं कोमलमेव न स्यात् ? ॥१–६॥

इस नाटक में विदूषक कहीं दिखाई नहीं पड़ता, अत्याचारी मुसलमानों के अत्याचारों का वर्णन बड़ी सुन्दर संस्कृत में किया गया है। यथा—"बलप्रकाशो दुर्बलपीड़ने, सहिष्णुता वेत्रप्रहारे, गाढ़ोद्यमः परमानुगत्ये, सन्तोषः संलापमात्रे, निवृत्तिः स्वाधीनतायाम्, वैराग्यञ्च पुरुषकारे।" कवि ने वङ्गीय वीरों की देशभक्ति का वर्णन बंग देश में मुसलमानों के अत्याचारों से पीड़ित बंगभूमि के उद्धार के लिये किया है। शंकर चक्रवर्ती ने कल्याणी के ऊपर किये

जाने वाले सम्भावित अत्याचार का कथन निम्न शब्दों में किया है—

"किङ्करीशिष्यमात्रसहाया कमलकोमलकलेवरा कल्याणी मे यवन-कवलिता भविष्यति ।"

वे मुसलमानों से शेर को अच्छा समझते हैं क्योंकि वह किसी नारी का सतीत्व हरण नहीं करता, न मन्दिर तोड़ता है और न धम ग्रन्थों को फूँकता है । तीर्थ स्थानों को भ्रष्ट नहीं करता, न हिन्दू जाति के नाश के लिये यत्नवान् है । उन्होंने इन भावों को कितने अच्छे शब्दों में कहा है—

नारीधर्म्मं न हरति, न वा जातिनाशं विधत्ते,
धर्म्मग्रन्थं दलति न च, नो देवमूर्त्ति भनक्ति ।
तीर्थस्थानं कलुषियति नो नापि वास्तूच्छिनत्ति,
शून्यारण्ये भ्रमति निनदन् सन्मुखस्थं हिनस्ति ॥

शंकर का जंगल में प्रतापादित्य से संगम होता है क्योंकि वह शिकार खेलने के लिये वहां वन में आया है । शेर किसके वाण से मारा गया ? इस वात पर दोनों झगड़ते हैं । शंकर प्रतापादित्य में हिन्दू जाति का प्रेम फूंकना चाहता है क्योंकि वह बग देश की यवनपाश से मुक्ति के लिये प्रयत्नशील है । वह प्रताप के दिल को जानने के लिये कहता है कि राजपुरुषों का विश्वास कैसे किया जाय वे विश्वासघाती होते हैं—

"कं वा विश्वसिमः, क वा नु रुदिमः केनापि वा प्राणिमः ।"

थोड़ी देर दोनों पेड़ के नीचे वैठकर देश की दशा पर चर्चा करते हैं, वहां शंकर वड़े आदमी दीनों के दुःख को नहीं जानते । आज के राजा भी प्रजा के पीड़न में सुख मानते हैं, केवल वे सुनी सुनाई वातों पर विश्वास कर लेते हैं । आंखों का काम भी कान से लेते हैं, कान के कच्चे होते हैं, नई नई स्त्रियों का भोगना ही सुख मानते हैं, प्रजा के सर्व सुख को लूटते हैं । जरा सा अपराध होने पर प्राण-दण्ड दे देते हैं । गरीबों को मार मार कर अपने शिकार के व्यसन की पूर्ति करते हैं इत्यादि वातें यवन राज्य के अत्याचारों से विह्वल होकर प्रताप को सुनाता है । वे शब्द निम्नलिखित हैं—

"हन्त ! बलवन्तो हि दुर्बलानामिदानीं जीवनमेवापराधं मन्यन्ते ।"

× × × ×

शशिकिरणविहारी वीक्षते नान्धकारम्,
मलयपवनसेवी ग्रीष्मतापं न वेत्ति ।
अनुभवति न सुस्थो रोगिणो वेदनां वा
न च पुनरधिनाथो बुध्यते दीन दैन्यम् ।।

× × × ×

दक्षेषु सतस्वपि विभुः सकलेन्द्रियेषु
कर्णेन कर्म्म कुरुते किल केवलेन ।
एकेन हन्त ! विदधद्बहुभिर्विधेयम्
विधात् कथं नु स यथायथवस्तु तत्त्वम् ।।

× × × ×

नवीनस्त्रीमात्रं गणयति विलासोपकरणम्
प्रजानां सर्व्वस्वं करगतनिजस्वञ्च मनुते ।
तृणस्तेये दण्डं प्रणयति परप्राणहरणम्
निरीहाणां खेलाकुतुकमसुभिः पूरयति च ।।

एक चावल को देखकर सारी बटलोई के चावल पके समझ लिये जाते हैं, तथा वस्तु का सामान्य ज्ञान होने पर विशेष की जिज्ञासा होती है। इन दो भावों के लिये सिद्धान्त वागीश ने बड़ी सुन्दर संस्कृत लिखी है, वे लिखते हैं—

"एकं वीक्ष्याखिलमपि जनो वेत्ति विक्लिन्नमन्नम्"

× × × ×

"उपपद्यते खलु सामान्ये नावगतस्यैव विशेषजिज्ञासा"

उनके अर्थान्तरन्यास पूर्ण प्रयोग बड़े चमत्कारपूर्ण हैं। गुणी आदमी निस्सहाय होने पर भी दूसरों की हां में हां नहीं मिलाता। इसके विषय में वे लिखते हैं—

सहाय शून्योऽपि गुणान्वितो जनः,
नैवानुगत्यं भजते प्रभोरपि ।
दण्डस्तरी बन्धन रश्मि संयतः,
महाप्रवाहे स्थिर एव लक्ष्यते ॥

इसी प्रकार यदि लोगों में फूट पड़ जाती है तो वे नष्ट हो जाते हैं। जैसे चिङ्गारी के टुकड़े घास के फूलों से बुझ जाते हैं—

ज्वलितेष्वनलेषु भीषणं, कणभूतेषु कुतोऽपि कारणात् ।
विरसो नयति ध्रुवं लयं, ननु तुच्छस्तृणगुच्छकोऽपितान् ॥

यह कवि अणुओं के संयोग से सृष्टि की उत्पत्ति जिस प्रकार होती है उसी प्रकार प्रताप और शंकर का मेल हिन्दू जाति के संगठन का बीज बने और यवन साम्राज्य के विरुद्ध कमर कसके प्रत्येक हिन्दू जाति का बालक खड़ा हो जावे। इसके लिये कहते हैं कि—

"इदं सुलघु मेलनं भजतु नौ महामेलने ।
निदानमणुवस्तुनोरिव जगद्विधानादितः ॥"

॥ इति प्रथमाङ्कालोचनम् ॥



❋ द्वितीय अङ्क की आलोचना ❋

इस अङ्क में वैराग्य प्रवण विक्रमादित्य गोविन्ददास साधु के साथ बातचीत कर रहे हैं। सन्ध्या में मन नहीं लगता इसके लिये कहते हैं—

"कुतोनाम गङ्गावगाहनं कूपमण्डूकानाम्"

गोविन्ददास कृष्ण-भक्त है उसे वंशी बजाने का शौक है वह गोपीयन्त्र (वंशी) की धुन निकालने में मस्त रहता है। "गृहंत्यज वनं व्रज हरि भज" यह उनका प्रिय गीत है, मूर्ख पुत्र से तो बांझ रहना उत्तम है। इसके लिये कवि कैसा सुन्दर शब्द विन्यास करता है देखिये—

"वैधेय सन्ततिभाजिन्म वन्ध्यता किल शान्तिनिदानम्"

ईश्वर की सर्वव्यापकता के लिये यह कथन—

अबोध मानव । राजति भगवान् ।। (टेक)

अनिले अनले दिविभुविजले सर्वशक्तिमान् ।।१।।

मृगइव वने चरसि भुवने तदीयान्वेषणे किमुतभक्तिमान् ।।२।।

रहसि मनसि यदि चिन्तयसि तदाभवसि सकलफलवान् ।।३।।

कस्तूरिका मृग की तरह संसार में ही खाक मत ढूंढो किन्तु अपने मन के अन्दर ही उसे टटोलो। इस बात को हरिदास कवि ने बड़ा ही ललित मधुर पदावली से व्यक्त किया है।

प्राणिह तथा साधु पुरुषों के बारे में लोकापवाद चन्द्रकलङ्क से भी भद्दा लगता है। यहां नीति का उपदेश कवि ने बड़े मनोहर ढङ्ग से किया है—

शस्त्रं च शास्त्रं च हुताशनं च, भवेद्दधानः खलु सावधानः ।
न चेदवश्यं भविताऽचिराय, प्राणस्य धर्मस्य गृहस्य चान्तः ।।

यह पद्य यथा संख्यालङ्कार का बड़ा ही सुरुचिपूर्ण उदाहरण है। दुर्जनों के सहवास से सज्जन भी बिगड़ जाते हैं। इसका वर्णन बड़ा चित्ताकर्षक है—

दुर्जनस्य किल साहचर्यतः, सज्जनोऽपि ननु दुर्जनायते ।
संगतं स्फटिक रत्नमुल्मुके, निर्मलं मलिनमेव दृश्यते ।।

प्रतापादित्य विक्रमादित्य वा वसन्तराय का विद्वेष्टा नहीं हो सकता। इसके लिये दिये गये दृष्टान्त हृदयस्पृक् हैं

उदेतिनो तीक्ष्णकरः सुधाकरात्,
न निष्पतत्यग्निकणः पयोधरात् ।
तमो न वाविर्भवति प्रभाकरात्,
न च प्रतापान् पितृवैरसंभवः ।।

अपना काणा और बदसूरत बेटा भी सबसे सुन्दर लगता है। इसके लिये कहते हैं कि—

प्रियः किलान्धोऽपि भवन् भवत्यहो,
प्रियान्तिके पद्मपलाशलोचनः ।।

मनुष्यों का चित्त दर्पण परगुणग्राही होता है यदि उस पर रागद्वेष मल न चढ़ा हो। कवि कहता है कि—

हृदयं खलु दर्पणो नृणां, प्रतिविम्बन्ति ततः स्वयं गुणाः।
यदि दुर्जन सङ्गजं मलं, न विकीर्णं प्रतिबन्धकं भवेत्॥

विद्या वही काम आती है जो याद हो—

"शिक्षा न सा भवति केवल पुस्तके या"

प्रताप को दिल्ली भेज कर स्वदेश-प्रेम तथा शंकर साहचर्य छुड़ाने के लिये दिल्ली भेजना निश्चित किया गया है, पर वह वहां जाकर और दृढ़मूल हो गया।



※ तृतीयाङ्क की आलोचना ※

नील— "तत् किं असुराणां स देशो लीलाभूमिः संवृत्तः" इस वाक्य में 'असुराणां लीलाभूमिः संवृत्तः' इस प्रकार अन्वय करना चाहिये। शंकर प्रतापादित्य का मन्त्रिपद बिना संभाले यवनों के अत्याचारों का प्रतीकार नहीं कर सकता। क्योंकि—

सदुद्यमो दीनतमोऽपि शङ्करः,
पदं पटुर्योग्यमुपेत्य सोऽधुना।
प्रतिक्रियाद् दुर्जनजातयातनाम्,
तमो हि सूर्योऽप्यनुदित्य हन्ति न॥

कल्याणी को कैद करने के लिये जो सिपाही आये हैं, उनमें घूस लेने की आदत तो है ही पर उनके कोतवाल में भी यह मर्ज है। इस बात का यहां सुन्दर प्रदर्शन किया गया है तथा उत्कोच (घूस) के दोषों का दिग्दर्शन भी मनोहर है—

भयं च पापं च भृशं ग्रहीतुः, चिरादविश्वासमपि प्रदातुः।
प्रभोःक्रियानाशमथाप्य कीर्तिम्, एकः किलोत्कोचरिपुः करोति॥

सुरेन्द्रनाथ जाति से ब्राह्मण होने पर नवाब का दास भृत्य बनकर शंकर की धर्मशीला धर्मपत्नी कल्याणी को बन्दी बनाने आया है। ठीक ही कहा है—

विप्रोभवन्नपि भवान् यवनार्थ मद्य,
विप्रस्य हि प्रसभमिच्छति सर्वनाशम् ।
देवः पिशाच परमोऽजनि देववैरी,
कुर्यात् कलिर्नुविषमं किमतः परं वा ॥

इस जगह सूर्यकान्त ग्रह तथा सुरेन्द्र का परस्पर वाक्कलह अच्छे प्रकार से उपक्षिप्त किया है। सती शिरोमणि कल्याणी नवाब के हाथ नहीं आ सकती क्योंकि हव्य का भक्षण कुत्ते नहीं किया करते—

"सवीय हविषः स्रुतिः पतति कुक्कुरास्ये किमु ?"

यवनों और पिशाचों में बड़ा अन्तर है, पिशाच तिरस्कार ही करता है, हिंसक जन्तुभक्ष वह होता है पर यवन इन दोनों से बढ़कर हैं, तिरस्कार भी करते हैं भयदायक भी हैं। कवि ने दृढानुकूल रचना भी की है- वे रौद्ररस के अनुकूल—

प्रकाण्डभुजमण्डल व्यथित चण्डको दण्डतः,
ज्वलज्ज्वलन वज्रवज्ञवगतैर्निशातैः शरैः ।
ध्वनन्ननिशमुद्धतं विजयबद्ध गर्द्धोऽधुना,
द्विजोऽपि पतितो यतः क्षितितले ततः पात्यसे ॥ ३-१७

इसके बाद सुरेन्द्र भागता ही नजर पड़ता है। सुरेन्द्र पूरा नमक हलाल है वह यवन नवाब के अनुचित आचार का समर्थन इन शब्दों में करता है—

हरति यवननाथः कस्यचित् कामिनीञ्चेत्
प्रभवति किमु रोद्धुं कोऽपि कायस्थ एकः ।
स्पृशति किरणजालैः पद्मिनीश्चेद् विवस्वान्
न खलु शिशिरबिन्दुः स्यान्निषेद्धुं समर्थः ॥ ३-१३

सती कल्याणी जब अपने को यवनों से घिरा पाती है तब क्रुद्ध सर्पिणी की तरह गुस्से में भरकर कहती है—

पृथिवि ! पृथिवि ! व्योमता मापद्यस्व, सागर ! सागर ! प्लावयस्व धरातलम्, वैश्वानर ! वैश्वानर ! ग्रसस्व चराचरम्, प्रभञ्जन ! प्रभञ्जन ! कल्पयस्व तिलशो ब्रह्माण्डम्, आकाश ! आकाश ! पाषाणात्मना निपतन् मर्द्दयस्व स्थावरजङ्गमम् जनार्दन ! चक्रपाणे ! क्व नाम ते सुदर्शनः ?। भीम ! शूलपाणे ! अपि शूलविहीनोऽसि ? देवराज ! वज्रपाणे ! ननु स्वस्थमस्ति ते वज्रम् ? मातर् दानवमर्द्दिनि ! किं विस्मृतासि खरं करवालम् ? हा सतीकुल देवते ! हैमवति ! (इति मूर्च्छति)।

फिर मूर्छित हो जाती है। प्रताप के समय पर आ जाने से कल्याणी की मान रक्षा हो जाती है तथा शङ्कर कह उठता है कि—

"न खलु कापि मन्दायन्ते निसर्ग निपुणाः।"

---

* चतुर्थाङ्क समीक्षा *

धीरेन्द्र और सूर्यकान्त कल्याणी के विषय में चर्चा कर रहे हैं कि वह तो स्थानान्तर पर पहुंचा दी गई, परन्तु हम दोनों भी यवनों के हमलों से तंग आकर अपने देश से भाग खड़े हुए—

'देशोऽपि हन्त ! विधिना विहितो विदेशः' ।

इधर अकबर दिल्ली में बैठा हुआ भारत की बड़ाई कर रहा है कि—

विद्याबुद्धिसमृद्धिसिद्धिविषयेष्वाद्यो जगच्छिक्षकः
देशोऽसावति विस्तृतो बहुजनः शूरोऽपि दक्षोऽपि च ।
भाषाधर्मपरिच्छदा बहुविधा भिन्नाश्च धीवृत्तयः
मन्ये भारतमेकमेव तदिदं पृथ्वीं किलान्यामहम् ॥

और अपनी दशा पर विचार करता हुआ कहता है कि मेरी और दुर्जन की दशा एकसी है। क्योंकि—

विशङ्कमानोऽप्यविशङ्कितत्वं भीतः पुनः सन्नपि निर्भयत्वम् ।
अन्तर्बहिर्भिन्नमिति स्वभावं महिपतिर्दुर्जनवद्बिभर्त्ति ॥२॥

तथा, पूर्वबङ्ग में बढ़ते हुए हिन्दुओं के स्वातन्त्र्य को दबाने के लिये वह मानसिंह को साधन बनाता है और कहता है कि—

"उद्धरिष्याम्यवश्यं तत् कण्टकेनैव कण्टकम् ।"

साथ ही वह यह भी जानता है कि बङ्गाली वाक्शूर होते हैं युद्ध शूर नहीं। क्योंकि टोडरमल के यह कहने पर कि—

"अन्तःसारविहीनो हि वक्ता प्रायेण दृश्यते ।"

अकबर कहता है कि यह बात नहीं, हिन्दुओं और बङ्गालियों में यदि कोई दोष है तो वह आपस की फूट ही है। वस्तुतः बङ्गवासीः—

वाग्मी च कर्मकुशलश्च महासुधीश्च,
शूरश्च शास्त्रनिपुणश्च सुलेखकश्च ।
किन्त्वेकता विरहितो विफलात्मशक्तिः
वह्निस्फुलिङ्ग इव वङ्गजनो न गण्यः ॥

यहीं पर आमेर देश की संस्कृत अम्बर बनाई है। अकबर ने पराये मन का वर्णन भी अच्छा किया है—

गिरिदुर्गमहो न दुर्गमं गहनं वा न भवेन्महावनम् ।
गहनं च भृशं च दुर्गमं परकीयं मन एव मन्यते ॥१५

अकबर ने प्रताप को औरों की अपेक्षा इन शब्दों में महत्ता दी है—

"गुणमहिम्ना त्वयि महीयानतिरेकः साधारणात् ,"

अकबर को बङ्गाल का कर नहीं मिला, इसलिये उसने प्रताप को बङ्गाल का राजा बनाना चाहा और प्रताप ने भी राजपद इसलिये स्वीकार करना चाहा कि बिना पद लिए शक्ति नहीं आती और इसलिये—

"असम्प्राप्तास्पदं बीजं कदाचिन्नाङ्कुरायते"

तथा, जैसे सूर्य पहले उदयाचल पर आता है, वाद में आकाश को व्याप्त करता है. उसी प्रकार राजा को अपनी राज्य सीमा बढ़ानी चाहिये।

"पूर्वं केवलपूर्वपर्वतमिनः सर्वं क्रमात्क्रामति"

तदनन्तर अपनी बुद्धिमत्ता और नीतिकुशलता से अकवर से राज्याभिषेक प्राप्त किया।

---

* पञ्चमाङ्कसमीक्षा *

नवाव कल्याणी के चित्र को देखकर उसके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर कहता है कि—

"हन्त! विवेकहीनो विघाता, यदि हि सृष्टमिदमपूर्वं रत्नं तर्हि किं नाम विन्यस्तं पर्णशालायां दरिद्रस्य।"

नवाव कल्याणी के पकड़ने के लिए धावा बोलकर पहुंचता है, वहां खेमों में नर्तकियों के नाच देखने में मस्त है, गङ्गा की गैल में मदार के गीत गाये जा रहे हैं। इतने में शङ्कर सैनिकों सहित नवाब के पड़ाव पर हमला करता है और नवाव कैद कर लिया जाता है। यदि प्रतापादित्य न रोकता, तो नवाब मार दिया जाता। यहां पर नवाव और शङ्कर की आपस की गर्मागर्मी कवि ने अच्छे रूप में वर्णन की है।

---

* षष्ठाङ्कसमीक्षा *

इस अङ्क में कवि ने माधवचन्द्र का प्रखर पाण्डित्य प्रदर्शित किया है, श्रीकृष्ण तर्कपञ्चानन के मुख से—

"मन्दं वर्षफलं दत्ते मन्दमन्त्री हि गीष्पतिः।"

यह कहलाते हुए अपने ज्योतिष शास्त्र ज्ञान का अच्छा खासा परिचय दिया है, क्योंकि यदि वृहस्पति वर्ष का राजा हो और शनिश्चर उसका मंत्री हो तो उस वर्ष में कोई लाभ नहीं हो सकता प्रत्युत हानि की ही संभावना रहती है। यहां अद्वैत सिद्धि का मधुसूदन सरस्वती का भी सादर स्मरण

किया है। बङ्गाली नारियल का हुक्का पीते हैं, इस प्रसङ्ग को उठाकर ताम्र-कूट तमाखू) की बड़ी प्रशंसा की है। स्त्रियां जो हुक्का पीती हैं, उसको गुड़िका कहते हैं। जो तमाखू के पत्ते मसलकर तमाखू चवाई जाती है, उसे 'दोक्ता' कहते हैं। विद्वान् लोग इसे सूँघते हैं, विलासी इसकी सिगरेट बनाते हैं। इस प्रकार तमाखू हुक्के के पानी से होती हुई उसमें गुड़गुड़ ध्वनि करती है और नेहचे और नली के द्वारा पीने वाले के मुख से निकलती है। यह लम्बा व्यायाम ही चक्राकार होने से पीने वाले को चक्रधारी कृष्ण का रूप दे देती है और कृष्ण के दर्शन के बाद उसे हुक्का पीने में मोक्षानन्द प्राप्त होता है। जैसा कि लिखा है—

नारीणां गुड़िका विखण्डितदलं दोक्ता च सक्ता पृथक्,
नस्यं भूरि मनीषिणां च चुरटं चञ्चद्विलासात्मनाम् ।
हुक्का गुड्गुडिकाल् बला विलसनैः शेषान् समालम्बते,
चक्रं दर्शयते च्युतं वितनुते मुक्ति प्रदत्ते परम् ॥६

उपहास के रूप में उत्तररामचरित को वेद का रूप देकर कहा गया है कि—

"अस्य भवभूतिर्ऋषिः, सीतादेवता, नानाविधं छन्दः, समास-प्रयोगे भीमाशक्तिः, कवियशोबीजम्, सम्मेलनं तत्त्वम्। इत्यादि

ब्राह्मणों के लिये यहाँ 'रवाहूत' शब्द का प्रयोग किया है, 'रव' का अर्थ कीर्ति है, अतः विद्या में प्रसिद्ध बुलाये गये यह अर्थ होता है। परमात्मा के विषय में भिन्न २ दर्शनों का परमात्मा कैसा है, इस विषय में लिखते हैं कि—

सांख्यस्य प्रकृतिप्रभिन्नपुरुषः पातञ्जलस्येश्वरः
न्यायस्याष्टगुणीश्वरः कृतिनिधिर्वैशेषिकस्यापि सः ।
मीमांसाद्वितये मुनिद्वयकृते वाक्यात्मकश्चाद्वयं
मन्त्रो ब्रह्म, यथा तथास्तु भगवान् भूयात् स वः श्रेयसे ॥१२

यहां भामतीकार वाचस्पति मिश्र का भी स्मरण किया है। साथ ही न्यायकुसुमाञ्जलिकार उदयन को भी याद किया गया है। तथा सब आये

हुए स्वाहूत ब्राह्मणों को स्वर्णमुद्रा और प्रशंसा-पत्र देने के बाद प्रताप का राज्याभिषेक समाप्त होता है।

* सप्तमाङ्कसमीक्षा *

अन्दर के शत्रु वाह्य शत्रुओं से भयावह हुआ करते हैं क्योंकि—

बहिर्विपक्षो न तथा भयावहो
यथान्तरस्थो विदितान्तरस्थितिः।
स्फुटन् व्रणो दृष्टिगतः सुशोधनो
देहान्तरस्थस्तु निहन्ति देहिनम् ॥१

यहां बसन्तराय अन्दर ही अन्दर कुछ प्रतापादित्य का विरोधी बन गया है जिसके कारण प्रताप ने अपने भाई राघव को कैद किये जाने की आज्ञा दी है। वीरेन्द्र और धीरेन्द्र का संवाद बड़ा हृदयग्राही है।

"सन्निपातविकारे हि विषं खल्वमृतायते"

यह लिखते हुए कवि ने अपनी आयुर्वेदज्ञता का भी परिचय दिया है। क्योंकि 'सन्निपात' में कुचले का प्रयोग शास्त्रविहित है। राघव अपने दिवङ्गत पिता की याद में जो विलाप करता है, वह मर्मस्पर्शी है। उसकी माता को मूर्छित होने पर दासियां उठाती हैं। भवानन्द प्रताप के अत्याचारों से लोगों को डराता है। राघव प्रताप को राज्यच्युत करने का षड्यन्त्र करता है। भवानन्द अपने किये पर पछताता है और कहता है कि—

हितैषी देशस्य स्वजनधन सञ्जीवनपणात्
स्वतन्त्रत्वस्वर्गं भुवि यदि यतेतारचयितुम्।
निपात्यैनं पापः पतति परतन्त्रत्वनरके
विधिर्वामः कामं दलति हि चिराद्भारतभुवम् ॥२६

आशीविषस्य विषदन्त च ये विनष्टे
गात्राणि जर्जरयते बत ! कुर्कुरोऽपि ।
सिंहस्य दैववशतो विशतश्च जालम्
आकर्षति स्फुरजटां हरिणोऽपि शृङ्गैः ॥२७

अन्तिम श्लोक में निःशस्त्र पर प्रहार करना युद्ध नियमों के विरुद्ध है। यहां दुर्जनसिंह और उदयादित्य की आपस की गर्मागर्मी की बातें बड़े सुन्दर शब्दों में लिखी गई हैं। दुर्जनसिंह उदयादित्य को चावलखावा कहता है तो उदयादित्य उसे सत्तूखावा कहता है और अन्त में उदयादित्य दुर्जनसिंह का काम तमाम करता हुआ कहता है कि—

विधाय विदुद्रूषतः समिति खण्डखण्डान् बहून्
पशून् पिशुनमानसापसद मानसिंहादिमान् ।
यशोरपति-चित्तग-क्षुभित-तीव्र-रोषानले
इहैव जुहवानि वस्तदनु वादसाहाधमम् ॥३६

※ अष्टमाङ्कसमीक्षा ※

मानसिंह कहता है कि—

वङ्गेष्वद्य पराजयेन स चिरान्मानस्य मानो गतः ।
लोकानामुपहास्यदूष्यमधुना तज्जीवनं यातना ॥१

कलङ्क से मरना अच्छा है, इस बात को निम्न शब्दों में कहा है—

लोकापवाद विकलस्य विकीर्ण कीर्तेः
सञ्जीवितं विफलमेव हतोद्यमस्य ।
ज्योत्स्नापतेर्घनघटा पिहितस्य नूनम्
अस्तं वरं हि परिलुप्तविकासशक्तेः ॥

मानसिंह और प्रतापादित्य एक दूसरे को उपालम्भ दे रहे हैं जन्मभूमि और माता की तुलना करते हुए जन्मभूमि को माता से बड़ा दर्जा देते हुए प्रताप कहता है कि—

धत्ते सा दशमासमात्रमखिलानाजीवनं जन्मभूः
स्तन्यं यच्छति सा समाद्वयमियं भक्ष्यं चिरायाङ्गजम् ।
बालेन प्रहृतैव तं प्रहरते सैषा तु सर्वंसहा
मातुर्भूमिरनेकधा गुरुतरा तेनातिमातोच्यते ॥१६

मानसिंह अपनी सेना को बढ़ावा देता हुआ कहता है कि हे मुग़ल वीरो !

"आविध्यन्तु विचूर्णयन्तु झटितिच्छिन्दन्तु भिन्दन्त्वपि ।"

प्रताप भी अपनी सेना से कहता है कि तुम यवनहरिणों के लिये—

सिंहायध्वम्—अस्पृश्य पिशाचयवन पर्वतों के लिये ।

वज्रायध्वम्—इनके शिविर के बहाने के लिये ।

सिन्धूयध्वम्—मानसिंहान्धकार को हटाने के लिये ।

सूर्यायध्वम्—उधर की सेना 'अल्लाहो अकबर' कहती हैं तो इधर के सैनिक 'हरहर महादेव' कहते हैं। तथा उन दोनों की सेनायें परस्पर

अभ्येति, गर्जति, दधाति, तिरस्करोति ।
व्याहन्ति, हन्ति, विभिनत्ति पतत्यपैति ॥

तथा यवन सेना में कुछ लोग—

"मुक्तकच्छा अपसरन्ति, अपरे अपसरन्त्व एव निपतन्ति विदीर्णदेहाः। केचिद् वेदनादूनदेहाः सुहृदोनापेक्षन्ते । पतन्ति सरिज्जले निमज्जन्ति तरङ्गेषु ।"

इस प्रकार प्रताप और मानसिंह की लड़ाई में आज के दिन मानसिंह परास्त हो गया और इस भरतवाक्य के साथ नाटक की समाप्ति हुई, जो वाक्य देश-भक्ति के रस से ओतप्रोत है:—

मुक्तेरप्यधिकास्तु भक्तिरुचिता जन्मावनौजन्मनः ।
वङ्गानां चिरभिन्नभिन्नमनसां नित्याभवत्वेकता ॥
ईतिर्नश्यतु रीतिरस्तु रुचिरा नीतिः सती जायताम् ।
शिष्टानुग्रह-दुष्टनिग्रह विधिं देश्येव चालम्बताम् ॥

नीरक्षीर विवेक

यह कवि 'समन्तात्' की जगह 'विश्वनां' का प्रयोग करता है। 'स्वागतम्' के लिए या 'जनान्तिकम्' के लिए "अन्तरालाभिमुखम्" कहता है। 'हस्तलाघव' के लिए 'हस्त्रशिक्षा' लिखता है। छन्दों में विद्युन्माला शिखरिणी, उपजाति, मालिनी, द्रुतविलम्वित छन्दों का अधिक प्रयोग किया है। शार्दूल व स्रग्धरा भी कहीं कहीं दृष्टिगोचर होते हैं।

व्याकरण के प्रयोगों में 'विहित्रिम्' शब्द—

"वदतु वस्तु निसर्ग मनोहरम्,
नहिविहित्रिम काभिमपेक्षते।"

इस नाटक में विदूषक का न होना खटकता है। कहीं कहीं सूक्तियां बड़ी सुन्दर हृदयग्राही हैं, जैसे—

समानपदेषु विद्वेषस्तुच्छ हृदयानाम् ।
समानवृत्तयः खलु स्वपरेषु साधुहृदया ॥ इत्यादि

किन्तु पृष्ठ ३४ पर 'आनयति' यह प्रयोग 'आनाययति' की जगह पर किया गया है, तथा पृष्ठ ५३ व ५४ पर 'त्वं मुकुन्दश्च कुत आगतः' 'आर्यः कुमारश्च प्रविष्टः', इन स्थानों पर क्रमशः 'आगतौ' और 'प्रविष्टौ' उचित प्रतीत होता है। पृष्ठ ७१ पर 'स्वर्णस्याक्षुरयश्चयस्य हि समः' इस ३३वें पद्य में 'अयश्च येन हि समः' यह पाठ उचित प्रतीत होता है। पृष्ठ ८७ पर १५वें पद्य में 'दण्डादण्डि' 'कचाकचि' के हमवजन 'मुष्टामुष्टि' बनाना पाणिनि शास्त्र के

विरुद्ध है। पृष्ठ १२४ पर 'प्रसूति-पितृ-सगर्भा सङ्गज स्वर्गभोगे' यह चरण कुछ अटपटा है, और इसी पृष्ठ पर 'अभिपिप्राय' यह प्रयोग व्याकरण की दृष्टि से असंगत है, इसके स्थान पर 'अभिप्रेयाय' चाहिये। पृष्ठ १४० पर

स्वस्थो रवीराहुमुखं विशत्यपि
न सौरिवत् वक्रगतिं तु गच्छति।

इस वाक्य में 'सौरि' शब्द का अर्थ 'शनैश्चर' है, जो अप्रसिद्धत्वदोषदूषित है। पृष्ठ ५० पर 'न खलु मन्दायन्ते निसर्ग निपुणाः' यह वाक्य कालिदास के 'मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थ कृत्याः' इस वाक्य को याद दिलाता है।

इस कवि ने महाकवियों की छाया का अनुसरण किया है; यह बात स्पष्ट होती है। जैसा कि श्रीहर्ष का पूरा श्लोक 'निषिद्धमप्याचरणीयम्' इत्यादि उद्धृत किया है। बालू के अर्थ में 'वालु' का सा संस्कृत में प्रयोग किया है—

"न वेला बालूनां प्रवलसरितो वारणसहाः"

अर्थात् बालू की भींत नदी के वेग को नहीं रोक सकती। पृष्ठ १३९ पर भारवि का एक पूरा श्लोक 'शक्ति वैकल्य नम्रस्य' इत्यादि उद्धृत कर दिया है। कुछ भी क्यों न हो, इस कवि ने कवित्व एवं शास्त्रज्ञत्व का अपने नाटक में अभूतपूर्व समन्वय करके जहां वीरता में बंगदेश के मस्तक को ऊंचा किया है, वहां पाण्डित्य में भी वङ्गीय प्रताप की स्थापना की है।

* इति शुभम् *

राजबल शर्मा के प्रबन्ध से अरविन्द प्रैस, हापुड़ रोड, मेरठ में मुद्रित।

हमारे अन्य प्रकाशन



ऋक्-सूक्त-संग्रह- डा० हरिदत्त शास्त्री एम० ए०, पी-एच० डी०

काव्य प्रकाश—डा० हरिदत्त शास्त्री एम० ए०, पी-एच० डी० तथा
—प्रो० श्रीनिवास शास्त्री एम० ए०

शिशुपाल-वध महाकाव्य (प्रथम सर्ग)—श्रीनिवास शास्त्री एम० ए०. पञ्चतीर्थ

रत्नावली नाटिका डा० शिवराज शास्त्री एम० ए०, पी-एच० डी०

वेणी संहार नाटक डा० शिवराज शास्त्री एम० ए०, पी-एच० डी०

वेदान्त सार—लक्ष्मीचन्द कौशिक साहित्याचार्य, एम० ए०

सांख्यकारिका - डा० हरिदत्त शास्त्री एम० ए०, पी-एच डी०

तर्कभाषा डा० सत्यनारायण पाण्डेय एम० ए० पी-एच० डी०

मीमांसा परिभाषा—डा० हरिदत्त शास्त्री एम० ए० पी-एच० डी०

एम० ए० संस्कृत व्याकरण—श्रीनिवास शास्त्री एम० ए०, पञ्चतीर्थ

संस्कृत-निबन्धमाला भाग १— प्रोफेसर सी० मिश्रा (जालन्धर)

संस्कृत निबन्धमाला भाग २—डा० रमेशचन्द्र शास्त्री

विक्रमाङ्क-देवचरितम् प्रथम सर्ग —डा० हरिदत्त शास्त्री एम० ए० तथा
—डा० नरेन्द्रदेव सिंह शास्त्री एम० ए०

नैषध-महाकाव्य (प्रथम सर्ग)—डा० शिवराज शास्त्री एम० ए०, पी-एच० डी०

भोज-प्रबन्ध—डा० शिवराज शास्त्री एम० ए०, पी-एच० डी०

रघुवंश-महाकाव्य (पञ्चम सर्ग)—प्रोफेसर सत्यनारायण पाण्डेय एम० ए०

रघुवंश-महाकाव्य (द्वितीय सर्ग) - प्रोफेसर सत्यनारायण पाण्डेय एम० ए०

संस्कृत अनुवाद, व्याकरण तथा रचना (भाग ४)—यदुनन्दन मिश्र एम० ए०

साहित्य भण्डार

सुभाष बाजार; मेरठ श

अरविन्द प्रेस, मेरठ।